**दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली**

***निर्णय की तिथि: 02 फरवरी, 2023***

**<u>निष्पादन याचिका 282/2012</u>**

**वीना महाजन** ..... डिक्री धारक

द्वारा: सुश्री गीता लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री शिवानी लूथरा लोहिया, सुश्री मैत्री भंडारी, सुश्री अपूर्वा माहेश्वरी और सुश्री प्रगति श्रीवास्तव, अधिवक्तागण।

बनाम

**वी. एन वर्मा** ..... निर्णीत ऋणी

द्वारा: श्री ए. के. सिंगला, वरिष्ठ अधिवक्ता सह श्री राहुल शुक्ला और श्री सायंतनी बसाक, अधिवक्तागण।
श्री अशोक गुरनानी, आक्षेपकर्ता के लिए अधिवक्ता।

**कोरमः**

**माननीय न्यायमूर्ति सुश्री नीना बंसल कृष्णा**

**<u>निर्णय</u>**

**<u>निष्पादन आवेदन (मू.प.) 682/2012</u>** *<u>(सि.प्र.सं., 1908 की धारा 151 सहपठित धारा 47 के अंतर्गत)</u>*

1. यह एक ऐसा मामला है जहाँ डिक्री धारक का अपना घर लेने का सपना तब हकीकत बन गया जब विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए वाद को दो महीने से भी कम समय में तत्परता के साथ डिक्री किया गया। हालाँकि, यह सपना तब एक मृगतृष्णा में बदल गया जब वह 1988 से निष्पादन कार्यवाही की राह पर एक लंबी और कठिन यात्रा पर निकल पड़ी, जो 38 साल बाद भी जारी है। एक अज्ञात लेखक की उक्ति *"मैं जितनी जल्दी करता हूँ, उतना ही पीछे होता जाता हूँ",* डिक्री धारक की दुविधा का सटीक रूप से वर्णन करती है। आपत्तियों के निर्धारण के बाद भी शायद इस डिक्री का निष्पादन समाप्त न हो।

2. यह मामला एक प्रतिकूल मुकदमेबाज़ी प्रणाली की मूल चुनौतियों और तत्काल सभी हितधारकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करने की आवश्यकता को दर्शाता है कि वे एक ऐसा तंत्र विकसित करने की ज़िम्मेदारी लें जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि डिक्री वाला व्यक्ति मात्र ऐसे कागज़ातों के साथ न रह जाए जिनका कोई व्यावहारिक कार्यान्वयन न हो।

3. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (*इसके बाद* "सि.प्र.सं., 1908" *के रूप में संदर्भित*) की धारा 151 के साथ पठित धारा 47 के तहत आपत्तियाँ सुश्री मीना रानी गुप्ता और सुश्री नलिनी गुप्ता (*इसके बाद* "आक्षेपकर्तागण" *के रूप में संदर्भित*) की ओर से, वादी/डिक्री धारक के पक्ष में डिक्री किए गए विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए वाद सं. 553/1998 में 29 अप्रैल, 1988 के निर्णय और डिक्री के निष्पादन के लिए डिक्री धारक सुश्री वीना महाजन (*इसके*

*बाद* "डिक्री धारक" *के रूप में संदर्भित*) की ओर से दाखिल निष्पादन याचिका में दायर की गई हैं।

4. वाद संपत्ति विक्रय अनुबंधों और अन्य सहायक दस्तावेज़ों के आधार पर विक्रय के शृंखलाबद्ध लेनदेनों के अधीन हो गई। श्री वी.एन. वर्मा, निर्णीत ऋणी (*इसके बाद* "निर्णीत ऋणी" *के रूप में संदर्भित*), मूल मालिक, ने ग्राम खेजी खास, इलाका शाहदरा, दिल्ली-110092 में राधू सिनेमा के पीछे चित्रा विहार में स्थित प्लॉट सं. 40 वाली अपनी संपत्ति (*इसके बाद* "वाद संपत्ति" *के रूप में संदर्भित*) को डिक्री धारक सुश्री वीना महाजन को दिनांक 14 फ़रवरी, 1986 को विक्रय अनुबंध *के तहत* बेच दी। 21 जनवरी, 1988 को निर्णीत ऋणी ने इस संपत्ति के संबंध में फिर से एक विक्रय लेनदेन के अधीन एक *विक्रय अनुबंध, वचन पत्र/शपथ पत्र*, पंजीकृत विल कमलेश गुप्ता के साथ की और उसके पति श्री गगन प्रसाद गुप्ता के साथ एक *पंजीकृत विशेष मुख्तारनामा और साधारण मुख्तारनामा* किया। विक्रय अनुबंध के आंशिक पालन में, उनको निर्णीत ऋणी द्वारा वाद की संपत्ति का भौतिक कब्ज़ा दिया गया था, और निर्माण के अनुबंध के तहत, वे इमारत को बढ़ाने या निर्माण करने और स्वयं या अपने नामांकित व्यक्ति के निवास के लिए इमारत का उपयोग करने या संपत्ति को आंशिक या पूर्ण रूप से किसी को किराये पर देने और ऐसे किरायेदारों से किराया वसूल करने के लिए पूरी तरह से अधिकृत थे।

5. मूल स्थिति में, विशिष्ट पालन और कब्ज़े हेतु और आंशिक भुगतान और क्षति के प्रतिदाय के विकल्प में डिक्री धारक द्वारा 07.03.1998 (अर्थात्, 21 जनवरी 1988 को कमलेश गुप्ता के पक्ष में विक्रय अनुबंध के निष्पादन के बाद) को सिविल वाद सं. 533/1988 शीर्षक *वीना महाजन बनाम वी.एन. वर्मा* दायर किया गया था।

6. इस न्यायालय ने 14 मार्च, 1988 के आदेश के तहत एक अंतरिम आदेश पारित किया, जिसमें प्रतिवादी अर्थात् वी.एन. वर्मा (निर्णीत ऋणी) को अस्थायी व्यादेश *के माध्यम से* संपत्ति को बेचने या कब्ज़े का विभाजन करने या किसी तीसरे पक्ष के अधिकार बनाने से रोक दिया गया।

7. 29 अप्रैल, 1998 के निर्णय के तहत वाद को डिक्री किया गया था। निर्णय का प्रवर्तनशील भाग इस प्रकार है:

> *"इस आने वाले दिन इस न्यायालय के समक्ष अंतिम निपटान के लिए इस वाद में उपरोक्त पक्षकारगण के अधिवक्ता की उपस्थिति में, यह आदेश दिया गया कि ग्राम खेजी खास, चित्रा विहार में स्थित प्लॉट सं. 40 जिसका माप 3602 वर्ग गज है, के संबंध में दिनांक 14.02.1986 को विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए एक डिक्री वादी के पक्ष में और प्रतिवादी के खिलाफ़ निम्नलिखित निर्देश देते हुए पारित की जाती है:*
>
> *i) वादी को 31.07.1998 को या उससे पहले 70,000/- रुपये की राशि जमा करनी होगी:*

*ii) वादी द्वारा राशि जमा करने पर, प्रतिवादी जमा की तिथि से तीस दिनों के भीतर वादी के पक्ष में आवश्यक दस्तावेज़ निष्पादित करेगा और प्रतिवादी द्वारा आवश्यक दस्तावेज़ निष्पादित नहीं करने की स्थिति में, वादी को वादी के पक्ष में आवश्यक दस्तावेज़ों को निष्पादित करने और वादी के खर्च पर उन्हें पंजीकृत करने के उद्देश्य से इस न्यायालय के एक अधिकारी की नियुक्ति के लिए उचित निर्देश के लिए आवेदन करने का हक होगा।"*

8. जबकि निष्पादन लंबित था, सुश्री कमलेश गुप्ता और श्री गगन प्रसाद गुप्ता ने आगे *26 नवंबर, 1990 को विक्रय अनुबंध, पंजीकृत विल, साधारण / विशेष मुख्तारनामा और रसीद* निष्पादित करके आक्षेपकर्तागण को वाद की संपत्ति बेच दी और आंशिक पालन में भूखंड का वास्तविक भौतिक और खाली कब्ज़ा उन्हें सौंप दिया। विक्रय अनुबंध के निष्पादन के समय आक्षेपकर्तागण को इसी तरह का आश्वासन दिया गया था कि वे सुश्री कमलेश गुप्ता या पुष्टि करने वाले पक्ष या उनके माध्यम से या उनके तहत दावा करने वाले किसी अन्य व्यक्ति से किसी भी प्रतिबाधा के बिना भूखंड को रखने, उपभोग करने और उपयोग करने और इसे कानून के तहत अनुमत रूप से प्रयोग करने के हकदार होंगे। इसके अतिरिक्त, विक्रय अनुबंध में यह भी खंड था कि विचाराधीन भूखंड किसी भी प्रकार के विल्लंगमों से बिल्कुल मुक्त है।

9. आवेदक सं. 1 सुश्री मीना रानी गुप्ता के पति श्री बिनोद कुमार गुप्ता और आवेदक सं. 2 सुश्री नलिनी गुप्ता के पति श्री अनंत कुमार गुप्ता के पक्ष

में न्यायवादी गगन प्रसाद गुप्ता के माध्यम से निर्णीत ऋणी द्वारा 11 सितंबर 1990 को भवन निर्माण के लिए एक अनुबंध भी निष्पादित किया गया था।

10. निर्णीत ऋणी ने नि.प्र.अ. (मू.प.) 86/1998 दाखिल करके निर्णय और डिक्री को चुनौती दी। आक्षेपकर्तागण को पहली बार 07 दिसंबर 1998 को वर्तमान वाद की लंबितता के बारे में पता चला। उन्होंने उक्त अपील में एक पक्ष के रूप में शामिल होने के लिए सि.प्र.सं., 1908 के आदेश I नियम 10 के तहत एक आवेदन दायर किया, लेकिन पक्षकार बनने के आवेदन को यह देखते हुए खारिज कर दिया गया कि आक्षेपकर्तागण वाद में अजनबी थे। आवेदन को खंड पीठ ने भी 18 जनवरी, 2012 के अपने निर्णय में खारिज कर दिया था।

11. इसने आक्षेपकर्तागण को 18 जनवरी, 2012 के निर्णय के खिलाफ़ नि.प्र.अ. (मू.प.) 125/1998 के माध्यम से एक स्वतंत्र अपील दायर करने के लिए प्रेरित किया, लेकिन इसे भी खारिज कर दिया गया। हालाँकि, अपील को खारिज करते हुए, खंड पीठ ने कहा कि आक्षेपकर्तागण के पास वाद की संपत्ति पर कब्ज़ा पाने के लिए जो भी बचाव उपलब्ध हैं, उन्हें डिक्री के निष्पादन के समय उठाया जा सकता है।

12. इसके बाद, आक्षेपकर्तागण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत एक याचिका दायर कर माननीय शीर्ष न्यायालय से अनुमति माँगी, लेकिन याचिका 04 जुलाई, 2012 के आदेश के तहत खारिज कर दी गई।

13. इसके बाद आक्षेपकर्तागण ने विशिष्ट पालन के लिए और क्षति के विकल्प के रूप में एक वाद संख्या सि.वा. (मू.प.) 779/2001 दायर किया, जिसका निपटान लंबित है।

14. डिक्री धारक ने 29 अप्रैल, 1998 के निर्णय और डिक्री के निष्पादन के लिए वर्तमान निष्पादन याचिका दायर की। आक्षेपकर्तागण ने अपने कब्ज़े के संरक्षण के लिए सि.प्र.सं., 1908 की धारा 47 के तहत आपत्तियाँ दायर की हैं क्योंकि वे संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क (*इसके बाद* "संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882" *के रूप में संदर्भित*) के तहत 26 नवंबर, 1990 को विक्रय अनुबंध के आंशिक पालन के माध्यम से वाद की संपत्ति के भौतिक कब्ज़े में हैं। आक्षेपकर्तागण ने प्राख्यान दिया है कि 26 नवंबर, 1990 को लेनदेन में प्रवेश करते समय, न तो उन्हें पता था कि निर्णीत ऋणी ने पहले ही डिक्री धारक के साथ एक विक्रय अनुबंध किया था और न ही उनकी जानकारी में वाद लंबित था।

15. आगे यह भी प्राख्यान दिया गया है कि डिक्री धारक और निर्णीत ऋणी के बीच दुस्संधि के कारण न्यायालय के साथ धोखाधड़ी की गई है। विचारण के दौरान प्रति.सा.-1 के रूप में प्रति-परीक्षा में निर्णीत ऋणी की स्वीकारोक्ति के बावजूद कि उसने सुश्री कमलेश गुप्ता के साथ एक विक्रय अनुबंध किया था, सुश्री कमलेश गुप्ता को वाद का एक पक्षकार बनाने के लिए निर्णीत ऋणी या डिक्री धारक द्वारा कोई कदम नहीं उठाया गया था।

16. वाद की शुरुआत के समय निर्णीत ऋणी के पास वाद की संपत्ति का भौतिक कब्ज़ा नहीं था। विक्रय अनुबंध निर्णीत ऋणी द्वारा वाद दायर करने से पहले सुश्री कमलेश गुप्ता के पक्ष में निष्पादित किया गया था और इस पर संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के तहत निहित विचाराधीन वाद का सिद्धांत लागू नहीं है। आक्षेपकर्तागण ने प्राख्यान दिया है कि उनके पास स्वतंत्र अधिकार हैं और संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के आधार पर वे अपने कब्ज़े के संरक्षण के हकदार हैं।

17. आक्षेपकर्तागण ने कहा है कि विधि का प्रश्न यह उठ रहा है कि क्या जिस व्यक्ति के पास विक्रय अनुबंध है, जो संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 से प्रभावित नहीं हो सकता है, उसे संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क का संरक्षण प्राप्त होगा और यदि ऐसा है, तो क्या ऐसा व्यक्ति उस अचल संपत्ति के संबंध में की गई डिक्री से बाध्य है, जिसमें उसे एक पक्षकार नहीं बनाया गया था।

18. यह प्रस्तुत किया गया है कि सि.प्र.सं., 1908 के आदेश I नियम 10 के तहत यह न्यायालय आक्षेपकर्तागण को वर्तमान कार्यवाही में एक पक्षकार के रूप में जोड़ेगा जैसा कि *बस्तर ट्रांसपोर्ट एंड ट्रेडिंग कंपनी और अन्य बनाम कोर्ट ऑफ़ वॉर्ड्स बस्तर और अन्य* ए.आई.आर. 1955 नागपुर 78 में अभिनिर्धारित किया गया है। आक्षेपकर्तागण के पास आपत्तियाँ दर्ज करने का अधिकार है, जिसके लिए *कंचेरला लक्ष्मीनारायण बनाम मट्टापर्थी श्यामला और अन्य* 2008

(14) 258 पर भरोसा किया गया है। इसलिए प्रार्थना की गई है कि आपत्तियों को अनुमति दी जाए और निष्पादन की कार्यवाही को खारिज कर दिया जाए।

19. **डिक्री धारक, वीना महाजन ने** आपत्तियों के उत्तर में प्रारंभिक आपत्ति जताई है कि आक्षेपकर्तागण ने पहले ही सभी उपायों का लाभ उठाया है और उनके सभी आवेदन और अपील खारिज कर दी गई हैं। वर्तमान आपत्तियाँ तुच्छ हैं और केवल कार्यवाही में देरी करने के गलत उद्देश्य से दायर की गई हैं।

20. आंशिक पालन के तर्क के जवाब में, यह प्राख्यान दिया गया है कि आक्षेपकर्तागण संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत किसी भी संरक्षण का लाभ नहीं उठा सकते हैं क्योंकि यह केवल हस्तांतरणकर्ता के खिलाफ़ उपलब्ध है, न कि किसी तीसरे पक्ष के खिलाफ़ जिसके लिए *रामभाऊ नामदेव गजरे बनाम नारायण बापूजी धोत्रा* (2004) 8 एस.सी.सी. 614 पर भरोसा किया गया है। आंशिक पालन के संरक्षण का लाभ आक्षेपकर्तागण द्वारा कथित अंतरक अर्थात् सुश्री कमलेश गुप्ता से लिया जा सकता था, जो मुख्य वाद में पक्षकार नहीं थीं।

21. **गुणागुण के आधार पर**, आवेदन में किए गए सभी प्रकथनों को डिक्री धारक द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

22. **प्रस्तुतियाँ सुनी गईं।**

23. बेशक, निर्णीत ऋणी जो वाद की संपत्ति का मालिक था, ने डिक्री धारक के साथ दिनांक 14 फ़रवरी, 1986 को एक विक्रय अनुबंध किया, लेकिन विक्रय विलेख को निष्पादित करने में विफल रहा। डिक्री धारक ने 1988 में विशिष्ट

पालन के लिए एक वाद दायर किया था, जिसे 29 अप्रैल, 1988 के निर्णय/डिक्री *द्वारा* डिक्री किया गया था, जिसके निष्पादन की माँग वर्तमान निष्पादन याचिका के माध्यम से की गई है।

24. *संजीव लाल और अन्य बनाम आयकर आयुक्त, चंडीगढ़ और अन्य*, (2015) 5 एस.सी.सी. 775 में शीर्ष न्यायालय ने टिप्पणी की कि जब विक्रेता के पक्ष में एक अधिकार बनाया जाता है, तो विक्रेता को उक्त संपत्ति किसी और को बेचने से रोक दिया जाता है क्योंकि क्रेता, जिसके पक्ष में व्यक्तिबंधी अधिकार बनाया जाता है, के पास अनुबंध के विशिष्ट पालन को लागू करने का वैध अधिकार होता है, यदि विक्रेता किसी कारण से विक्रय विलेख निष्पादित नहीं कर रहा है। इस प्रकार यह समझा जा सकता है कि विक्रय अनुबंध के निष्पादन का परिणाम यह है कि मालिक संपत्ति को किसी और को नहीं बेच सकता है और विक्रेता का संपत्ति को आगे बेचने का अधिकार निर्वापित हो जाता है।

25. बिना किसी डर के और *संजीव लाल* (पूर्वोक्त) में बताए गए विधिक प्रतिबंध की अवज्ञा करते हुए, निर्णीत ऋणी आगे बढ़ा और 21 जनवरी, 1988 को सुश्री कमलेश गुप्ता और उसके पति, गगन प्रसाद के पक्ष में *विक्रय अनुबंध, पंजीकृत विल, पंजीकृत साधारण/विशेष मुख्तारनामा* निष्पादित किया। इसके बाद, वर्तमान वाद मार्च, 1988 में डिक्री धारक द्वारा दायर किया गया था और व्यादेश आदेश 14 मार्च, 1988 को दिया गया था, जो निर्णीत ऋणी द्वारा सुश्री कमलेश गुप्ता को वाद की संपत्ति के कब्ज़े को सौंपने के बाद दिया

गया था। सुश्री कमलेश गुप्ता ने 26 नवंबर, 1990 को आक्षेपकर्तागण के पक्ष में विक्रय अनुबंध को निष्पादित किया, जिन्हें बाद में वाद की संपत्ति का कब्ज़ा दिया गया।

**<u>संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के तहत विचाराधीन वाद का सिद्धांत:</u>**

26. आक्षेपकर्तागण ने दावा किया है कि विचाराधीन वाद का सिद्धांत उन पर लागू नहीं होता है क्योंकि उन्होंने अपना मालिकाना हक निर्णीत ऋणी से नहीं, बल्कि सुश्री कमलेश गुप्ता से प्राप्त किया है, जो वाद में पक्षकार नहीं थी।

27. गौरतलब है कि आक्षेपकर्तागण का मालिकाना हक का दावा वाद में किए गए डिक्री के निष्पादन के लंबित रहने के दौरान किए गए लेनदेन पर आधारित है, अर्थात्, वे वादकालीन अंतरिती हैं जिनका अधिकार निर्णीत ऋणी से व्युत्पन्न है, भले ही वह कमलेश गुप्ता के माध्यम से हो।

28. विचाराधीन वाद का नियम न्याय, समानता और सद्भावना के सिद्धांतों पर आधारित है, जो संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 में निहित है। यह निम्नानुसार है: -

> *"धारा 52 -संपत्ति संबंधी वाद के लंबित रहते हुए संपत्ति का अंतरण।-*
>
> *जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर भारत की सीमाओं के अंदर प्राधिकारवान या 2 केंद्रीय सरकार द्वारा ऐसी सीमाओं के परे स्थापित किसी न्यायालय में ऐसे वाद या कार्यवाही के लंबित रहते हुए, जो दुस्संधिपूर्ण न हो और जिसमें अचल संपत्ति का*

*कोई अधिकार प्रत्यक्षतः और विनिर्दिष्टतः प्रश्नगत हो, वह संपत्ति उस वाद या कार्यवाही के किसी भी पक्षकार द्वारा उस न्यायालय के प्राधिकार के अधीन और ऐसे निबंधनों के साथ, जैसे वह अधिरोपित करे अंतरित या व्ययनित की जाने के सिवाय ऐसे अंतरित या अन्यथा व्ययनित नहीं की जा सकती कि उसके किसी अन्य पक्षकार के किसी डिक्री या आदेश के अधीन, जो उसमें दिया जाए, अधिकारों पर प्रभाव पड़े।*

*स्पष्टीकरण।—किसी वाद या कार्यवाही का लंबन इस धारा के प्रयोजनों के लिए उस तिथि से प्रारम्भ हुआ समझा जाएगा जिस तिथि को सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय में वह वादपत्र प्रस्तुत किया गया या वह कार्यवाही संस्थित की गई और तब तक चलता हुआ समझा जाएगा जब तक उस वाद या कार्यवाही का निपटान अंतिम डिक्री या आदेश द्वारा न हो गया हो और ऐसी डिक्री या आदेश की पूरी तुष्टि या उन्मोचन अभिप्राप्त न कर लिया गया हो या तत्समय प्रवृत्त-विधि द्वारा उसके निष्पादन के लिए विहित किसी अवधि के अवसान के कारण वह अनभिप्राप्य न हो गया हो।"*

29. *बल्लामी बनाम सबाइन*, (1857) 1 डीईजीएंडजे 566 में, लॉर्ड क्रैनवर्थ, एल.सी. ने लगभग डेढ़ शताब्दी पहले समझाया था कि यह सिद्धांत मुकदमेबाज़ी को समाप्त करने की आवश्यकता पर आधारित है जो अन्यथा अनंत काल तक जारी रहेगा। इसका प्रासंगिक पैराग्राफ़ इस प्रकार है:

*"...जहाँ किसी विशेष संपत्ति के अधिकार के संबंध में वादी और प्रतिवादी के बीच मुकदमा लंबित है, मानव जाति की*

*आवश्यकताओं के लिए आवश्यक है कि मुकदमे में न्यायालय का निर्णय न केवल मुकदमा करने वाले पक्षकारगण पर, बल्कि उन पक्षकारगण पर भी बाध्यकारी हो जो वाद के लंबित रहने के दौरान किए गए अन्यसंक्रामण के माध्यम से उनके तहत मालिकाना हक प्राप्त करते हैं, चाहे ऐसे अन्यसंक्रामणकर्ता पक्षकारगण को लंबित कार्यवाही का नोटिस दिया गया था या नहीं। यदि ऐसा नहीं होता है, तो इस बात की कोई निश्चितता नहीं हो सकती कि वाद कभी समाप्त होगा।"*

30. *अमित कुमार शॉ बनाम फरीदा खातून* (2005) 11 एस.सी.सी. 403 में, माननीय शीर्ष न्यायालय ने टिप्पणी की कि इसलिए, विचाराधीन वाद का सिद्धांत केवल तभी लागू होता है जब वाद न्यायालय के समक्ष लंबित होता है। इसमें निम्नलिखित तत्वों की गणना की गई है जो विचाराधीन वाद के गठन के लिए मौजूद होने चाहिए:

*"1. सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय में कोई वाद या कार्यवाही लंबित होनी चाहिए।*

*2. वाद या कार्यवाही दुस्संधिपूर्ण नहीं होनी चाहिए।*

*3. मुकदमेबाज़ी ऐसी होनी चाहिए जिसमें अचल संपत्ति का अधिकार सीधे और विशेष रूप से प्रश्नगत हो।*

*4. मुकदमेबाज़ी में किसी भी पक्ष द्वारा विवादग्रस्त संपत्ति का अंतरण या अन्यथा व्ययन होना चाहिए।*

*5. इस तरह के अंतरण से दूसरे पक्ष के अधिकार प्रभावित होने चाहिए जो अंततः डिक्री या आदेश के निबंधनों के तहत प्राप्त हो सकते हैं।"*

31. *श्रीमती राम पियरी बनाम गौरी और अन्य*, ए.आई.आर. 1978 सभी 318 में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने बताया कि यह नियम सार्वजनिक नीति के सिद्धांतों पर आधारित है, जिसमें वाद के लंबित रहने के दौरान खरीदारी करने वाले क्रेता को एक पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं होती है और उसके पास मुकदमेबाज़ी करने वाले पक्षकारगण की तुलना में गौण अधिकार होंगे। इसने *विचाराधीन वाद* के सिद्धांत की व्याख्या इस प्रकार की:

*"...आम तौर पर, यह सच है कि न्यायालय का निर्णय केवल पक्षकारगण और उनके संसर्गियों को अभ्यावेदन या संपत्ति में बाध्य करता है। लेकिन जो कोई कार्रवाई के लंबित रहने के दौरान खरीदारी करता है, वह उस निर्णय से बंधा होता है जो उस व्यक्ति के खिलाफ़ हो सकता है जिससे वह मालिकाना हक व्युत्पन्न करता है। मुकदमेबाज़ पक्षकारगण को इस प्रकार अर्जित हक का कोई भी नोटिस लेने से छूट दी गई है और ऐसे क्रेता को कार्रवाई में पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं है। जहाँ बिना किसी नोटिस के वास्तविक और उचित खरीद होती है, वहाँ नियम बहुत मुश्किल से काम कर सकता है। लेकिन यह एक महत्वपूर्ण सार्वजनिक नीति पर आधारित नियम है; अन्यथा, किसी कार्रवाई के दौरान किए गए अन्यसंक्रामण उसके पूरे उद्देश्य को विफल कर सकते हैं, और मुकदमेबाज़ी का कोई अंत नहीं होगा। **और इसलिए वाद के दौरान कुछ बदलाव नहीं होना***

***चाहिए सूक्ति उत्पन्न होती है;*** *जिसका उद्देश्य हस्तांतरण को रद्द करना नहीं है, बल्कि केवल मुकदमेबाज़ी में पक्षकारगण के अधिकारों को गौण करना है। जहाँ तक इन पक्षकारगण के अधिकारों का संबंध है, हस्तांतरण को ऐसा माना जाता है जैसे कि इसका कोई अस्तित्व नहीं था, और इससे उनमें कोई अंतर नहीं पड़ता है।"*

32. *उषा सिन्हा बनाम दीना राम* (2008) एस.सी.सी. 144 के मामले में माननीय शीर्ष न्यायालय ने वादकालीन अंतरिती के अधिकारों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि निर्णीत ऋणी के अंतरिती को न्यायालय के समक्ष हो रही कार्यवाही से अवगत समझा जाना चाहिए। इस प्रकार, उसे उस संपत्ति को खरीदने से पहले सावधान रहना चाहिए जो मुकदमेबाज़ी के अधीन है। सि.प्र.सं., 1908 के आदेश XXI का नियम 102 इस प्रकार ज़मीनी हकीकत को ध्यान में रखता है और उस संपत्ति के क्रेताओं की सहायता करने से इनकार करता है जिसके संबंध में मुकदमा लंबित है। यह संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 में निहित विचाराधीन वाद के सिद्धांत को मान्यता देता है। इसी तरह की टिप्पणियाँ शीर्ष न्यायालय ने *सरविंदर सिंह बनाम दलीप सिंह* (1996) 5 एस.सी.सी. 539 में की थीं।

33. *संजय वर्मा बनाम माणिक रॉय और अन्य* (2006) 13 एस.सी.सी. 608 में, समानता, सद्भावना और न्याय के अनुसार, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 में निहित सार्वजनिक नीति के सिद्धांतों को लागू करते

हुए, यह निष्कर्ष निकाला गया कि यदि अन्यसंक्रामण को प्रबल होने दिया जाता है और सद्भावना या सद्भाव का कोई प्रश्न नहीं उठता है, तो किसी कार्रवाई या वाद को सफलतापूर्वक ढंग से समाप्ति तक लाना असंभव होगा। एक वादकालीन अंतरिती डिक्री से बंधा हुआ है जैसे कि वह वाद का एक पक्षकार था। केवल किसी वाद का लंबित होना किसी भी पक्ष को वाद की विषय वस्तु वाली संपत्ति के व्ययन से नहीं रोकता है। धारा केवल यह शर्त रखती है कि किसी वाद में पारित किसी भी डिक्री के तहत अन्यसंक्रामण किसी भी तरह से दूसरे पक्ष के अधिकारों को प्रभावित नहीं करेगा, जब तक कि संपत्ति न्यायालय की अनुमति से अन्यसंक्रामित नहीं की गई हो। इस प्रकार *बल्लामी* (पूर्वोक्त) में व्यक्त दृष्टिकोण का समर्थन किया गया।

34. इसी प्रकार, *एम.एस. मंसूर दीन और अन्य बनाम फातिमुथु बेवी एवं अन्य* (2009) 4 सी.टी.सी. 489 में, मद्रास उच्च न्यायालय ने टिप्पणी की कि निर्णीत ऋणी वाले वादकालीन अंतरिती, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के तहत जिनके पास कोई स्वतंत्र अधिकार नहीं है, निष्पादन का विरोध नहीं कर सकता है क्योंकि विचाराधीन वाद के सिद्धांत के तहत एक वाद में पारित डिक्री जिसके लंबित रहने के दौरान एक अंतरण प्रभावित होता है, डिक्री को अंतरिती पर बाध्यकारी बनाता है।

35. *सिल्वरलाइन फ़ोरम प्राइवेट लिमिटेड बनाम राजीव ट्रस्ट* (1998) 3 एस.सी.सी. 723 में, वादकालीन अंतरिती के कारण हुए प्रतिरोध पर विचार

करते हुए, माननीय शीर्ष न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि न्यायनिर्णयन का दायरा इस प्रश्न तक ही सीमित है कि क्या वह उस वाद के लंबित रहने के दौरान अंतरिती था जिसमें डिक्री पारित की गई थी। यदि ऐसा निष्कर्ष सकारात्मक है, तो निष्पादन न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए कि उसे कार्यवाही का विरोध करने या उसमें बाधा डालने का कोई अधिकार नहीं है और ऐसा व्यक्ति निष्पादन न्यायालय से संरक्षण की माँग नहीं कर सकता है। ऐसे तीसरे पक्ष के अंतरिती को आगे की दलीलें उठाने से बाहर करना संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 में बताए गए हितकारी सिद्धांत पर आधारित है। उदाहरण के लिए, यदि अवरोधक स्वीकार करता है कि वह वादकालीन अंतरिती है, तो उसके द्वारा उठाए गए प्रश्न को निर्धारित करना आवश्यक नहीं है कि जब उसने संपत्ति खरीदी थी तो वह मुकदमे से अनजान था। इसी तरह, एक तीसरा पक्ष जो डिक्री धारक द्वारा किसी समनुदेशिती को किए गए अंतरण की वैधता पर प्रश्न उठाता है, वह यह दावा नहीं कर सकता है कि इसकी वैधता के संबंध में प्रश्न निष्पादन कार्यवाही के दौरान तय किया जाना चाहिए।

36. इसलिए, निर्धारण के लिए प्रश्न यह है कि क्या आक्षेपकर्तागण का मालिकाना हक डिक्री धारक से उच्च है और क्या वे सुश्री कमलेश गुप्ता द्वारा उनके पक्ष में दिनांक 26 नवंबर, 1990 को निष्पादित विक्रय अनुबंध के बल पर कब्ज़ा बनाए रखने के हकदार हैं।

37. विक्रय अनुबंध निर्णीत ऋणी द्वारा डिक्री धारक के पक्ष में 14 फ़रवरी, 1986 को निष्पादित किया गया था। इसके बाद, उसने 21.01.1988 को सुश्री कमलेश गुप्ता के साथ एक और विक्रय अनुबंध किया, जो इस वाद की स्थापना से पहले का है। एक बार जब विक्रय अनुबंध 14 फ़रवरी, 1986 को डिक्री धारक के पक्ष में पहले ही निष्पादित हो चुका था, तो कोई भी बाद का विक्रय अनुबंध स्पष्ट रूप से 14 फ़रवरी, 1986 के विक्रय अनुबंध में निर्धारित हित के अनुसरण में होगा।

38. सुश्री कमलेश गुप्ता विक्रय अनुबंध के निष्पादन की माँग केवल तभी कर सकती थी यदि वह यह स्थापित कर सकती कि उसका मालिकाना हक डिक्री धारक से उच्च था। लेकिन उसके पक्ष में किसी भी विक्रय विलेख के अभाव में, वह किसी भी स्वामित्व अधिकार का दावा नहीं कर सकती थी। इस प्रकार, केवल विक्रय अनुबंध के आधार पर, वह स्वामित्व अधिकार अंतरित नहीं कर सकती थी जो उसके पास स्वयं नहीं था।

39. आक्षेपकर्तागण का एकमात्र दावा वर्तमान वाद के लंबित रहने के दौरान सुश्री कमलेश गुप्ता द्वारा दिनांक 26 नवंबर, 1990 को निष्पादित विक्रय अनुबंध पर निर्भर करता है। स्वीकार किए गए तथ्यों से, यह स्पष्ट है कि सुश्री कमलेश गुप्ता के पास केवल एक विक्रय अनुबंध और उसके पक्ष में अन्य दस्तावेज़ थे, लेकिन बड़ा प्रश्न यह है कि क्या केवल विक्रय अनुबंध का निष्पादन वाद की संपत्ति के विक्रय के बराबर है जैसा कि संपत्ति अंतरण

अधिनियम, 1882 की धारा 54 के तहत परिभाषित किया गया है या क्या यह केवल मालिक अर्थात् निर्णीत ऋणी के अधिकारों के अधीन एक अनुबंध था।

40. सुश्री कमलेश गुप्ता और उसके पति गगन प्रसाद हित के पूर्वाधिकारी हैं, जिनके माध्यम से आक्षेपकर्तागण एक अधिकार और मालिकाना हक का दावा कर रहे हैं जो हित के पूर्वाधिकारी अर्थात् सुश्री कमलेश गुप्ता से उच्च नहीं हो सकता है। बल्कि, सुश्री कमलेश के अधिकार डिक्री धारक के अधीनस्थ हैं जैसा कि *राम पियरी* (पूर्वोक्त) के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त, निर्णीत ऋणी ने डिक्री धारक के साथ दिनांक 14 फ़रवरी, 1986 को विक्रय अनुबंध किया था और उसे विधि द्वारा तीसरे पक्ष के साथ किसी भी आगे के विक्रय लेनदेन में प्रवेश करने से व्यादिष्ट कर दिया गया था। *संजीव लाल* (पूर्वोक्त) मामले में शीर्ष न्यायालय के निर्णय से मौजूदा तथ्यों का सटीक उत्तर मिल जाता है।

41. डिक्री धारक को उसके पक्ष में 29 अप्रैल, 1988 की डिक्री पहले ही मिल चुकी है और उसे 14 फ़रवरी, 1986 को निष्पादित विक्रय अनुबंध के आधार पर विशिष्ट पालन का हकदार माना गया है, जो कि 21 जनवरी, 1988 को कमलेश के पक्ष में निष्पादित दस्तावेज़ों से पहले का है, जिसके माध्यम से आक्षेपकर्तागण मालिकाना हक का दावा कर रहे हैं।

42. हालाँकि निर्णीत ऋणी और कमलेश गुप्ता के बीच विक्रय अनुबंध को 21 जनवरी, 1988 को निष्पादित किया गया था, अर्थात्, डिक्री द्वारा वाद की

स्थापना से पहले, लेकिन कमलेश गुप्ता और आक्षेपकर्तागण के बीच 26 नवंबर, 1990 को विक्रय अनुबंध को डिक्री धारक के पक्ष में दिनांक 29 अप्रैल, 1988 के विशिष्ट पालन के लिए डिक्री के बाद निष्पादित किया गया था। इस प्रकार, कमलेश गुप्ता और गंगा प्रसाद गुप्ता, हालाँकि वाद में पक्षकार नहीं थे, को सि.वा. (मू.प.) 553/1988 में डिक्री के निष्पादन के लिए निष्पादन याचिका सं. 282/2012 में पक्षकार बनाया गया था।

43. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के स्पष्टीकरण में कहा गया है कि विचाराधीन वाद डिक्री के निर्वहन तक कायम रहता है। डिक्री का निष्पादन अभी तक प्रभावी नहीं होने के कारण, वाद सं. 553/1998 अभी भी संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 के प्रयोजनों के लिए लंबित है, जिससे कमलेश गुप्ता और आक्षेपकर्तागण के बीच लेनदेन संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52, 1882 के दायरे में आता है। जैसा कि *संजय वर्मा* (पूर्वोक्त) में देखा गया है, एक वादकालीन अंतरिती डिक्री से बंधा हुआ है, इस प्रकार अपीलार्थीगण, जो कि कमलेश गुप्ता से अंतरिती थे, डिक्री से बंधे हुए हैं।

44. *सुरजीत सिंह बनाम हरबंस सिंह* (1995) 6 एस.सी.सी. 50 में, माननीय शीर्ष न्यायालय ने इस प्रश्न, कि क्या उस व्यक्ति, जिसे वाद की संपत्ति को विचारण न्यायालय द्वारा प्रारंभिक डिक्री पारित करने के बाद हस्तांतरित किया गया है, जिसने पक्षकारगण को वाद संपत्ति को अन्यसंक्रामित करने या अन्यथा अंतरित करने से रोक दिया था, को पक्षकार बनने का अधिकार है, का उत्तर

नकारात्मक में दिया। माननीय शीर्ष न्यायालय ने समनुदेशितियों के पक्षकार को खारिज करते हुए यह भी टिप्पणी दी थी कि यदि प्रतिबंध आदेश की अवज्ञा में अन्यसंक्रामण/समनुदेशन की अनुमति दी जाती है, तो यह न्याय के उद्देश्यों और प्रचलित सार्वजनिक नीति को विफल कर देगा। जब न्यायालय किसी विशेष स्थिति को अस्तित्व में रखने का इरादा रखता है, जबकि यह एक वाद के कब्ज़े में है, तो उस स्थिति को न केवल बनाए रखने की आवश्यकता होती है, बल्कि तब तक अस्तित्व में माना जाता है जब तक कि न्यायालय अन्यथा आदेश नहीं देता। इन परिस्थितियों में न्यायालय का यह कर्तव्य और अधिकार भी है कि वह अन्यसंक्रामण/समनुदेशन को उसके उद्देश्यों के लिए बिल्कुल भी नहीं किया गया माने।

45. *विदुर इम्पेक्स एंड ट्रेडर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम तोश अपार्टमेंट प्राइवेट लिमिटेड और अन्य* (2012) 8 एस.सी.सी. 384 में, *सुरजीत सिंह* (पूर्वोक्त) का संदर्भ देते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि जहाँ विक्रय अनुबंध किया गया था और यहाँ तक कि उसके वाद विक्रय विलेख को प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा अपीलार्थीगण के पक्ष में गुप्त तरीके से और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए व्यादेश का उल्लंघन करते हुए निष्पादित किया गया था, यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसे विक्रय विलेख के आधार पर अपीलार्थीगण द्वारा वाद संपत्ति में कोई वैध मालिकाना हक या हित अर्जित किया गया है।

46. इस प्रकार, सुश्री कमलेश गुप्ता और आवेदक के बीच दिनांक 26.11.1990 का लेनदेन संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 में दिए गए विचाराधीन वाद के सिद्धांत के अंतर्गत आता है और आवेदक द्वारा प्राप्त अधिकार, यदि कोई हो तो, लंबित वाद के परिणाम के अधीन हैं। इस वाद को डिक्री धारक, वीना महाजन के पक्ष में डिक्री किया गया है और उसके अधिकार एक उच्च मालिकाना हक में बदल गए हैं और सुश्री कमलेश गुप्ता केवल विक्रय अनुबंध के आधार पर किसी भी मालिकाना हक के अधिकार का दावा नहीं कर सकती है। सुश्री कमलेश गुप्ता आक्षेपकर्तागण के पक्ष में इससे उच्च कोई मालिकाना हक अंतरित नहीं कर सकती थी। इस प्रकार, भले ही उसने 26 नवंबर, 1990 को आक्षेपकर्तागण के पक्ष में विक्रय अनुबंध, विल, विशेष मुख्तारनामा, साधारण मुख्तारनामा और रसीद निष्पादित की, उनके अधिकार न केवल विचाराधीन वाद के सिद्धांत से प्रभावित हुए, बल्कि डिक्री धारक वीना महाजन के पक्ष में दिए गए डिक्री के अधीन भी थे।

47. आक्षेपकर्तागण के पास संपत्ति में कोई वैध स्वतंत्र अधिकार नहीं है और इस प्रकार, उनकी आपत्तियाँ गुणागुण रहित हैं और उन्हें अपने कब्ज़े के संरक्षण की माँग करने का कोई अधिकार नहीं है।

**<u>संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत कब्ज़े का संरक्षण:</u>**

48. आक्षेपकर्तागण को सुश्री कमलेश गुप्ता द्वारा दिनांक 26.11.1990 के विक्रय अनुबंध के अनुसार कब्ज़ा दिया गया होगा, लेकिन दूसरा पहलू यह है

कि क्या वे संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत किसी संरक्षण की माँग कर सकते हैं।

49. यदि कोई अंतरिती संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत अपने कब्ज़े का बचाव या संरक्षण करना चाहता है तो जिन आवश्यक शर्तों को पूरा करना आवश्यक है, उन्हें शीर्ष न्यायालय ने *श्रीमंत शामराव सूर्यवंशी बनाम प्रल्हाद भैरोबा सूर्यवंशी* (2002) 3 एस.सी.सी. 676 में समझाया है, जो इस प्रकार हैं:

> *"1. किसी भी अचल संपत्ति पर विचार करने के लिए अंतरण संविदा होनी चाहिए।*
> *2. संविदा लिखित रूप में, और अंतरक द्वारा या उसकी ओर से किसी व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित होनी चाहिए।*
> *3. लेखन ऐसे शब्दों में होना चाहिए जिनसे अंतरण का अर्थ निकालने के लिए आवश्यक शर्तों का पता लगाया जा सके।*
> *4. अंतरिती के पास संविदा के आंशिक पालन में संपत्ति, या उसके किसी भाग पर कब्ज़ा होना चाहिए;*
> *5. अंतरिती ने संविदा को आगे बढ़ाने के लिए कुछ कार्य किया होना चाहिए;*
> *6. अंतरिती ने संविदा के अपने भाग का प्रदर्शन किया होगा या करने के लिए तैयार होना चाहिए।"*

50. यदि ये शर्तें पूरी की जाती हैं, तो संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत प्रदान किया गया आंशिक-पालन का न्यायसंगत सिद्धांत

प्रस्तावित अंतरिती के पक्ष में लागू होता है, जो प्रस्तावित अंतरक के खिलाफ़ अपने कब्ज़े का संरक्षण कर सकता है, भले ही मालिकाना हक बताने वाला पंजीकृत विलेख प्रस्तावित अंतरक द्वारा निष्पादित नहीं किया गया हो। संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत प्रदान किया गया संरक्षण केवल अंतरक के विरुद्ध है। यह अंतरक को प्रस्तावित अंतरिती के कब्ज़े में खलल डालने से वंचित कर देता है, जिसे ऐसे विक्रय अनुबंध के अनुसरण में कब्ज़ा दिया गया है।

51. *उत्तर प्रदेश राज्य में बनाम ज़िला न्यायाधीश एवं अन्य* 1997 (1) एस.सी.सी. 496, यह टिप्पणी की गई कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 के तहत संरक्षण केवल अंतरक और प्रस्तावित विक्रेता के खिलाफ़ एक ढाल के रूप में उपलब्ध है, जो प्रस्तावित अंतरितियों के कब्ज़े में गड़बड़ी करने से वंचित है, जिन्हें इस तरह के अनुबंध के अनुसार कब्ज़े दिया गया है। लेकिन इसका प्रस्तावित अंतरक के स्वामित्व से कोई लेना-देना नहीं है, जो तब तक उक्त भूमि का पूर्ण मालिक बना रहता है जब तक कि प्रस्तावित अंतरितियों को विक्रय विलेख द्वारा विधिक रूप से हस्तांतरण नहीं करा दिया जाता है। आगे यह देखा गया कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क केवल प्रस्तावित विक्रेता के कब्ज़े के संरक्षण के लिए है और उसे उस कब्ज़े के संरक्षण का अधिकार दे सकती है जिसे उन्होंने विक्रय अनुबंध के अनुसार हासिल किया है, लेकिन इस तरह के अधिकार को किसी तीसरे पक्ष के खिलाफ़ प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

52. इस मामले के तथ्यों में जो प्रासंगिक प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या आंशिक-पालन के सिद्धांत का लाभ उन आक्षेपकर्तागण द्वारा उठाया जा सकता है जिनके साथ निर्णीत ऋणी ने कभी भी विक्रय अनुबंध में प्रवेश नहीं किया है। *रामभाऊ नामदेव गजरे बनाम नारायण बापूजी धोत्रा* (2004)8 एस.सी.सी. 614 मामले में भी ऐसे ही तथ्य विचार के लिए सामने आए। मालिक ने पिशोरीलाल के साथ एक विक्रय अनुबंध किया, जिसने आंशिक-पालन के रूप से कब्ज़ा भी ले लिया। विक्रय विलेख कभी निष्पादित नहीं किया गया था। ढाई महीने की अवधि के भीतर, पिशोरीलाल ने अपीलार्थी के पक्ष में एक वैसा ही विक्रय अनुबंध निष्पादित किया और उसे वाद भूमि पर कब्ज़ा दे दिया। पिशोरीलाल, जिसके पक्ष में केवल विक्रय अनुबंध था, उसके पास कोई स्वामित्व अधिकार नहीं था और इस प्रकार उसे अपीलार्थीगण के साथ विक्रय अनुबंध करने का कोई अधिकार नहीं था।

53. वर्तमान तथ्यों में भी मालिक ने एक सुश्री कमलेश गुप्ता के पक्ष में बेचने के लिए एक विक्रय अनुबंध को निष्पादित किया था, जिसने बदले में वर्तमान आक्षेपकर्तागण के पक्ष में 26 नवंबर, 1990 को विक्रय अनुबंध के तहत एक और विक्रय अनुबंध को निष्पादित किया था, और उन्हें कब्ज़ा भी दे दिया। केवल विक्रय अनुबंध होने के कारण सुश्री कमलेश गुप्ता मालिक नहीं थी और संभवतः वर्तमान आक्षेपकर्तागण के साथ वाद संपत्ति के संबंध में विक्रय अनुबंध नहीं कर सकती थी।

54. *रामभाऊ नामदेव गजरे* (पूर्वोक्त) में, यह देखा गया कि विक्रय अनुबंध वाद की संपत्ति में प्रस्तावित क्रेता का कोई हित उत्पन्न नहीं करता है। संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 54 के अनुसार, 100 रुपये से अधिक मूल्य की अचल संपत्ति का स्वामित्व केवल पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित करके ही दिया जा सकता है। यह धारा विशेष रूप से बताती है कि अचल संपत्ति के विक्रय का अनुबंध एक ऐसा अनुबंध है जो इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि ऐसी संपत्ति की विक्रय पक्षकारगण के बीच तय किए गए निबंधनों पर होगी, लेकिन इससे उनका ऐसी संपत्ति पर कोई हित या प्रभार नहीं बनता है। जब तक प्रस्तावित अंतरिती के पक्ष में विक्रय अनुबंध के अनुसार विक्रय का एक पंजीकृत दस्तावेज़ निष्पादित नहीं किया जाता है, तब तक वाद भूमि का स्वामित्व मूल मालिक के पास ही रहता है और संपत्ति उसके स्वामित्व में रहती है। आंशिक पालन के सिद्धांत का लाभ प्रस्तावित अंतरिती द्वारा अंतरक या उसके अधीन दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति के खिलाफ़ किया जा सकता है, न कि उस तीसरे पक्ष के खिलाफ़ जिसके साथ उसका कोई संविदात्मक संबंध नहीं है।

55. विक्रय अनुबंध का दायरा और विक्रय अनुबंध के तहत रचे गए अधिकार, मालिकाना हक और हित को शीर्ष न्यायालय ने *सूरज लैंप एंड इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड बनाम हरियाणा राज्य* (2012) 1 एस.सी.सी. 656 मामले में समझाया था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि विशेष मुख्तारनामा, साधारण मुख्तारनामा जैसे अन्य दस्तावेज़ों के साथ विक्रय अनुबंध अंतरण या विक्रय का

लेनदेन नहीं है और इसे पूर्ण विक्रय या अंतरण के रूप में नहीं माना जा सकता है। उन्हें मौजूदा विक्रय अनुबंध के रूप में मानना जारी रखा जा सकता है और प्रभावित पक्षकारगण को अपना स्वामित्व पूरा करने के लिए पंजीकृत दस्तावेज़ प्राप्त करने से कोई नहीं रोकता है। इन दस्तावेज़ों का उपयोग संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53क के तहत विशिष्ट पालन प्राप्त करने या कब्ज़े के संरक्षण के लिए भी किया जा सकता है या विकास प्राधिकरणों द्वारा आवंटन/पट्टों के नियमितीकरण के लिए आवेदन करने के लिए भी किया जा सकता है। हालाँकि, स्वतंत्र रूप से विक्रय अनुबंध मात्र एक अनुबंध ही रहता है और वाद की संपत्ति में स्वामित्व के किसी वैध अंतरण के रूप में कार्य नहीं करता है।

56. *रेखा ननकानी बनाम कुलवंत सिंह सचदेवा और अन्य* (2009) 107 डी.आर.जे. 282 मामले में, इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि यदि कोई संपत्ति मालिक/विक्रेता के अनुबंध से बंधी है, तो केवल इसलिए कि विक्रेता ने संपत्ति अंतरित कर दी है, अंतरिती विक्रेता से उच्च अधिकार प्राप्त नहीं करेगा और विक्रेता के दायित्व के अधीन होगा। इसी तरह की टिप्पणियाँ *श्रीमती राम पियरी* (पूर्वोक्त) में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा की गईं।

57. इसलिए, उपरोक्त चर्चित मामले में निर्धारित विधि के मद्देनज़र, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आक्षेपकर्तागण संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क के तहत अपने कब्ज़े के किसी भी संरक्षण के हकदार नहीं हैं।

**<u>डिक्री धारक और निर्णीत ऋणी के बीच कथित धोखाधड़ी और दुस्संधि:</u>**

58. आक्षेपकर्तागण द्वारा एक अभिवचन दायर किया गया है कि 29 अप्रैल, 1988 का निर्णय और डिक्री निष्पादन योग्य नहीं है क्योंकि इसे डिक्री धारक और निर्णीत ऋणी के बीच धोखाधड़ी और दुस्संधि से प्राप्त किया गया है ताकि प्रश्नगत संपत्ति में कमलेश गुप्ता के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े, जिसके पास 21 जनवरी, 1988 के विक्रय अनुबंध के मद्देनज़र संपत्ति के खिलाफ़ प्रवर्तनीय अधिकार थे, जिसे उसके पक्ष में निष्पादित किया गया था और उसे प्रश्नगत संपत्ति का भौतिक कब्ज़ा दिया गया था।

59. यद्यपि आवेदक की ओर से धोखाधड़ी का अभिवचन दिया गया है, लेकिन डिक्री धारक और निर्णीत ऋणी के बीच धोखाधड़ी और दुस्संधि का दावा करने के अलावा, ऐसा कोई और तथ्य सामने नहीं आया है जिससे धोखाधड़ी और दुस्संधि का कोई निष्कर्ष निकाला जा सके। वास्तव में, 14 फ़रवरी, 1986 का विक्रय अनुबंध डिक्री धारक, सुश्री वीना महाजन के पक्ष में निष्पादित किया गया था, जो 21 जनवरी, 1988 के सुश्री कमलेश गुप्ता के पक्ष वाले विक्रय अनुबंध के निष्पादित होने से पहले का था। आवेदक द्वारा अपनी आपत्तियों में प्रथम दृष्टया किसी धोखाधड़ी या दुस्संधि का भी खुलासा नहीं किया गया है।

60. इसके अलावा, निर्णीत ऋणी ने नि.प्र.अ. (मू.प.) 86/1998 के माध्यम से डिक्री धारक के पक्ष में डिक्री को चुनौती देते हुए एक अपील दायर की थी, जिसे 18 जनवरी, 2012 को गुणागुण के आधार पर खारिज कर दिया गया

था। निर्णीत ऋणी का आचरण भी डिक्री धारक के साथ किसी दुस्संधि को नहीं दर्शाता है।

**14 फ़रवरी, 1986 के पहले के विक्रय अनुबंध को रद्द करना:**

61. आक्षेपकर्तागण ने यह दावा करते हुए वाद की संपत्ति पर अपने अधिकार का प्राख्यान दिया है कि निर्णय में ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकला है कि वाद परिसर के संबंध में डिक्री धारक के साथ अनुबंध को रद्द करने के बाद ही निर्णीत ऋणी ने सुश्री कमलेश गुप्ता के साथ विक्रय अनुबंध किया था। सुश्री कमलेश गुप्ता के साथ विक्रय अनुबंध में प्रवेश करने से पहले निर्णीत ऋणी द्वारा डिक्री धारक के पक्ष में विक्रय अनुबंध को रद्द करने के बारे में विवाद के ऐसे किसी भी निर्धारण के अभाव में, निर्णीत ऋणी के खिलाफ़ विशिष्ट पालन की डिक्री पारित नहीं की जा सकती थी।

62. यह तर्क पूरी तरह से भ्रामक है क्योंकि डिक्री धारक के पक्ष में विशिष्ट पालन की डिक्री की अनुमति देते समय विक्रय अनुबंध के आसपास के सभी पहलुओं पर विशेष रूप से विचार किया गया था। डिक्री धारक के पक्ष में विक्रय अनुबंध को रद्द करने के पहलू पर 29 अप्रैल, 1998 के निर्णय में विशेष रूप से विचार किया गया था। डिक्री धारक के पक्ष में विक्रय अनुबंध को रद्द करने के इस पहलू पर भी नि.प्र.अ. (मू.प.) 86/1998 में विशेष रूप से विचार किया गया था और इसे अस्वीकार कर दिया गया था। इसके अतिरिक्त, 29 अप्रैल, 1988 की डिक्री को चुनौती देना आक्षेपकर्तागण के दायरे में नहीं है, जो पहले ही अंतिम रूप ले चुकी है।

**<u>वास्तविक खरीद: डिक्री धारक के पक्ष में पिछले विक्रय अनुबंध की जानकारी न होना:</u>**

63. आक्षेपकर्तागण ने बचाव में कहा है कि उन्हें डिक्री धारक और निर्णीत ऋणी के बीच हुए विक्रय अनुबंध की जानकारी नहीं थी। विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 19 उनके तहत दावा करने वाले पक्षों को बाद के मालिकाना हक द्वारा राहत प्रदान करती है। यह इस प्रकार है:

> ***<u>"धारा 19:</u>***
>
> *इस अध्याय द्वारा यथा उपबन्धित के सिवाय संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन निम्नलिखित के खिलाफ़ कराया जा सकेगा–*
>
> *(क) उसका कोई पक्षकार;*
>
> *(ख) ऐसे मूल्यार्थ अंतरिती के सिवाय, जिसने अपना धन सद्भावपूर्वक तथा मूल संविदा की सूचना के बिना दिया हो, ऐसा कोई दूसरा व्यक्ति, जो उससे व्युत्पन्न ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो संविदा के पश्चात् उद्भूत हुआ हो;*
>
> *(ग) ऐसा कोई व्यक्ति जो ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो हक, यद्यपि संविदा के पहले का और वादी की जानकारी में था, तथापि प्रतिवादी द्वारा विस्थापित किया जा सकता था;*
>
> *(घ) जबकि किसी कंपनी ने कोई संविदा की हो और उसके पश्चात किसी दूसरी कंपनी से समामेलित हो गई हो तब ऐसे समामेलन से उद्भूत नई कंपनी ;*
>
> *(ङ) जबकि किसी कंपनी के सम्प्रवर्तकों ने उसके निगमन के पहले कोई संविदा कंपनी के प्रयोजन के लिए की हो और संविदा ऐसी हो जो निगमन के निबंधनों द्वारा समर्थित हो, तब वह*

*कंपनी: परन्तु यह तब जब कंपनी ने संविदा को प्रतिगृहीत कर लिया हो और संविदा के दूसरे पक्षकार को ऐसा प्रतिग्रहण के बारे में सूचित कर दिया हो।"*

64. लॉर्ड बकमास्टर ने *श्रीमती फातिमा बीबी बनाम सआदत अली*, ए.आई.आर. (1930) प्रिवी काउंसिल में पाँच न्यायाधीशों की पीठ के लिए बोलते हुए पुराने विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 27 (ख) के एक समविषयी उपबंध पर निर्वचन देते हुए अभिनिर्धारित किया कि भले ही मालिकाना हक विक्रय अनुबंध के बाद का हो सकता है, जिसके विशिष्ट पालन का दावा किया गया है, लेकिन यदि वह मालिकाना हक अनुबंध की तिथि से पहले की तिथि के अनुबंध के अनुसरण में था, जिसके विशिष्ट पालन का दावा किया गया था, तो वादी विशिष्ट पालन की राहत का हकदार नहीं है।

65. *आर.के. मोहम्मद उबैदुल्लाह एवं अन्य बनाम हाजी सी. अब्दुल वहाब (डी) अन्य* (2000) 6 एस.सी.सी. 402 में, माननीय शीर्ष न्यायालय ने कहा कि संपत्ति खरीदने वाले व्यक्ति को यह पता लगाने के लिए आवश्यक प्रयास करना चाहिए कि जिस व्यक्ति से वह संपत्ति खरीद रहा है उसका ऐसी संपत्ति पर मालिकाना हक या हित और वास्तविक कब्ज़ा है या नहीं। विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 19 और संपत्ति अंतरण, 1882 की धारा 52 के प्रभाव को ध्यान में रखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि बाद के खरीदारों को वाद की संपत्ति खरीदने से पहले उचित रूप से सूचित किया जाना चाहिए।

66. *गुरुस्वामी नादर बनाम पी. लक्ष्मी अम्मल* (2008)5 एस.सी.सी. 796 मामले में भी इसी तरह के तथ्य विचार के लिए आए थे, जिसमें विशिष्ट पालन के लिए एक वाद के लंबित होने के दौरान, मालिक ने संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति को बेच दी थी और सद्भावी क्रेता के विवाद की जाँच की गई थी। यह अभिनिर्धारित किया गया कि सद्भावपूर्ण क्रय का बचाव विचाराधीन वाद के दौरान लागू नहीं होता है।

67. पहले के विक्रय अनुबंध या सद्भावपूर्ण क्रय से अनभिज्ञ होने का यह अभिवचन आक्षेपकर्तागण का बचाव नहीं करता है।

**कब्ज़े की किसी राहत का दावा नहीं किया गया है:**

68. आक्षेपकर्तागण ने यह आधार लिया है कि वर्तमान वाद में डिक्री डिक्री धारक के पक्ष में वाद की संपत्ति के संबंध में दिनांक 14 फ़रवरी, 1986 को विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए थी। मूल प्रश्न जो उत्पन्न हुआ है वह यह है कि क्या डिक्री धारक कब्ज़े का दावा कर सकता है जब निर्णीत ऋणी स्वयं उस पर भौतिक कब्ज़े में नहीं था। इसके अतिरिक्त, कब्ज़े को सौंपने के संबंध में कोई राहत नहीं दी गई, भले ही यह वाद में माँगी गई राहतों में से एक था। इसलिए, डिक्री धारक कब्ज़ा माँगने का हकदार नहीं है।

69. विभिन्न निर्णयों में इस बात पर मतभेद रहा है कि क्या विशिष्ट पालन के लिए डिक्री निष्पादित करते समय कब्ज़ा दिया जा सकता है, जब कब्ज़े की कोई राहत नहीं माँगी गई हो। भ्रम को दूर करने के लिए, विधि आयोग ने 19 जुलाई, 1958 को प्रस्तुत अपनी 9वीं रिपोर्ट में विशिष्ट राहत अधिनियम,

1963 की धारा 22 को शामिल करने की सलाह दी, जिसमें प्रावधान किया गया कि विशिष्ट पालन के वाद में कोई राहत तब तक नहीं दी जा सकती जब तक कि इसका विशेष रूप से दावा न किया गया हो। इस प्रकार विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 22 पेश की गई जो इस प्रकार है:

> "***<u>धारा 22. कब्ज़ा, विभाजन, अग्रिम धन का प्रतिदाय आदि के लिए राहत अनुदत्त करने की शक्ति–(1)</u>*** *सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में किसी तत्प्रतिकूल बात के अन्तर्विष्ट होते हुए भी, अचल संपत्ति के अंतरण की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का बाद लाने वाला कोई व्यक्ति, समुचित मामले में–*
>
> *(क) ऐसे पालन के अतिरिक्त संपत्ति का कब्ज़ा या विभाजन और पृथक् कब्ज़ा माँग सकेगा, अथवा*
>
> *(ख) उस दशा में जिसमें कि उसका विनिर्दिष्ट पालन का दावा नामंज़ूर कर दिया गया हो कोई भी अन्य राहत, जिसका वह हकदार हो और जिसके अंतर्गत उस द्वारा दिए गए किसी अग्रिम धन या निक्षेप का प्रतिदाय भी आता है, माँग सकेगा।*
>
> *(2) उपधारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) के अधीन कोई भी राहत न्यायालय द्वारा अनुदत्त नहीं की जाएगी जब तक कि उसका विनिर्दिष्टतया दावा न किया गया हो:*
> *परन्तु जहाँ कि वादपत्र में वादी ने किसी ऐसे राहत का दावा न किया हो वहाँ न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रकम में वादी को वादपत्र में ऐसी राहत का दावा अन्तर्गत करने के लिए संशोधन करने की अनुज्ञा ऐसे निबंधनों पर देगा जैसे न्यायसंगत हों।*

*(3) उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन राहत अनुदत्त करने की न्यायालय की शक्ति धारा 21 के अधीन प्रतिकर देने की उसकी शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी।"*

70. इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसके लिए प्रार्थना करने के बावजूद कब्ज़े की कोई विशेष राहत नहीं दी गई है। इस पहलू पर मद्रास उच्च न्यायालय ने *एस.एस. राजबाथर बनाम एन.ए. सईद* ए.आई.आर. 1974 मद्रास 289 में विचार किया था, जिसमें अभिनिर्धारित किया गया कि यदि विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन की राहत एक डिक्री द्वारा दी गई थी, तो अनुबंध को विशेष रूप से निष्पादित करने के लिए जो कुछ भी आवश्यक था, उसे निष्पादन में आदेश दिया जा सकता है और सूचित किया जा सकता है।

71. *ग्यासा बनाम श्रीमती रिसालो* ए.आई.आर. 1977 इलाहाबाद 156 में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अचल संपत्ति के अंतरण की संविदा के विशिष्ट पालन के लिए वाद में विभाजन या भिन्न कब्ज़े के कब्ज़े का दावा करना वादी के लिए हमेशा अनिवार्य नहीं था। यह वहाँ किया जाना चाहिए जहाँ परिस्थितियाँ इसकी माँग करती हैं। विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन की राहत के दायरे में न केवल विक्रय विलेख का निष्पादन बल्कि संपत्ति का कब्ज़ा भी शामिल है जो विक्रय विलेख का विषय है। इसी तरह की टिप्पणियाँ *नारायण पिल्लई कृष्णा पिल्लई बनाम पोन्नुस्वामी चेट्टियार सुब्बलक्ष्मी अम्मल* ए.आई.आर. 1978 केरल 236; कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा *देबब्रत ताराफदर बनाम बिराज मोहन बर्धन*

ए.आई.आर. 1983 कलकत्ता 51, *श्रीमती धीरज बालाकारिया बनाम जेथिया एस्टेट प्राइवेट लिमिटेड* 1982 एस.सी.सी. ऑनलाइन कलकत्ता 152 में की गई थीं।

72. इसी तरह की स्थिति, जैसे कि हमारे समक्ष है, *बाबू लाल बनाम हजारी लाल किशोरी लाल और अन्य* (1982) 1 एस.सी.सी. 525 में माननीय शीर्ष न्यायालय द्वारा चर्चा की गई थी, जिसमें यह टिप्पणी की गई थी कि अधिनियम की धारा 22 की उप-धारा (1) में दिखाई देने वाली अभिव्यक्ति "एक उपयुक्त मामले में" का अर्थ है कि तीसरे व्यक्ति के खिलाफ़ कब्ज़े की राहत माँगी जानी चाहिए क्योंकि वह लागू होने वाली संविदा से बाध्य नहीं है। माननीय शीर्ष न्यायालय ने आगे कहा कि कब्ज़े की राहत डिक्री धारक को दी जा सकती है जहाँ संपत्ति विक्रय अनुबंध के आधार पर देने पर सहमति होती है। यह तर्क कि वादी को सभी मामलों में संविदा के विशिष्ट पालन के लिए वाद में कब्ज़े का दावा करना चाहिए, को भी अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 22 उचित मामलों में कब्ज़े से राहत की बात करती है।

73. *एस. संपूर्णम बनाम पी.वी. कुप्पुस्वामी 2007 एस.सी.सी. ऑनलाइन मद्रास 365* में उच्चतम न्यायालय ने उसी सिद्धांत को दोहराया और अभिनिर्धारित किया कि कब्ज़े के लिए प्रार्थना के अभाव में भी, एक बार विशिष्ट पालन के लिए वाद के डिक्री हो जाने के बाद, न्यायालय को विशिष्ट

राहत अधिनियम की धारा 22 (2) के परंतुकों के अनुसार कब्ज़े को सौंपने का आदेश देने की पूरी शक्ति मिल गई है।

74. माननीय उच्चतम न्यायालय ने *मणिकम थंडापानी और अन्य बनाम वसंत* 2022 लाइव लॉ (एस.सी.) 395 में उपरोक्त निर्णयों का संदर्भ लिया और इस बात पर ज़ोर दिया कि विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 22 की उप-धारा 1 में उल्लिखित वाक्यांश *"एक उपयुक्त मामले में"* अनिवार्य रूप से यह आवश्यक नहीं है कि कब्ज़े का दावा किया जाना चाहिए और विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए प्रत्येक वाद में अनुदत्त किया जाना चाहिए। ऐसा केवल तभी होता है जब वादी/तीसरा पक्ष विशिष्ट पालन के लिए वाद में अकेले संपत्ति का मालिकाना हक हासिल कर लेता है और कब्ज़े/विभाजन के लिए उसका दावा स्वतंत्र अधिकारों पर आधारित होता है, तो ऐसे मामले में, केवल विक्रय विलेख के निष्पादन पर डिक्री धारक को कब्ज़ा नहीं सौंपा जा सकता है, जो संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55 (1) के अनुरूप है। हालाँकि, ऐसे मामलों में जहाँ विक्रय अनुबंध में डिक्री धारक को कब्ज़ा समनुदेशित की परिकल्पना की गई है, तो डिक्री धारक के लिए संपत्ति पर विशेष रूप से कब्ज़े का दावा करना आवश्यक नहीं हो सकता है जैसा कि विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963 की धारा 22 (1) में प्रदान किया गया है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला गया कि हालाँकि अधिनियम की धारा 22 (2), जो नकारात्मक भाषा में है, में कहा गया है कि *"उप-धारा (1) के खंड (क) या खंड (ख) के तहत न्यायालय द्वारा कोई राहत नहीं दी जाएगी जब तक कि इसका*

*विशेष रूप से दावा नहीं किया गया हो"*, लेकिन इसके लिए परंतुक मूल उपबंध से अनिवार्य प्रकृति को बाहर निकालता है और वादी को *"कार्यवाही के किसी भी चरण में"* वाद में संशोधन करने की अनुमति देता है। माननीय शीर्ष न्यायालय ने स्पष्ट किया कि किसी भी "*कार्यवाही के चरण*" में वाद की कार्यवाही, अपील की कार्यवाही और निष्पादन की कार्यवाही भी शामिल होगी। धारा 22(2) का परंतुक बिना किसी दंडात्मक परिणाम के उपबंध निर्देशिका बनाता है। अधिनियम की धारा 22(2) में केवल "उपयुक्त मामले में" कब्ज़ा माँगने के लिए विवेक का नियम शामिल है। यह नहीं कहा जा सकता है कि यह एक अनिवार्य उपबंध है या इस प्रकार दी गई विशिष्ट राहत के अभाव में विशिष्ट पालन के लिए डिक्री में कब्ज़े की राहत नहीं दी जा सकती है।

75. इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भले ही कब्ज़े के लिए राहत डिक्री में नहीं दी गई थी, लेकिन यह विक्रय अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए डिक्री में अंतर्निहित है। इसलिए, डिक्री धारक कब्ज़े से राहत का हकदार है।

76. इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला गया है कि आवेदकों, सुश्री मीरा रानी गुप्ता और सुश्री नलिनी गुप्ता द्वारा दायर सि.प्र.सं., 1908 की धारा 47 के तहत वर्तमान आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

**<u>निष्पादन याचिका 282/2012 और निष्पादन आवेदन (मू.प.) 302/2019, 3241/2022, 3542/2022, 3543/2022</u>**

77. 23 फ़रवरी, 2023 को रोस्टर पीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया गया।

**(नीना बंसल कृष्णा)**
**न्यायाधीश**

**02 फ़रवरी, 2023**
*एस. शर्मा/पीए*

*(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)*

***अस्वीकरण :*** *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*